आवश्यकता: व्यवहार में बदलाव की

बाइबल पाठ #25

VI. तीसरे फसह से यीशु के बैतनिय्याह में आने तक (क्रमश:)।
- थ. पिरिया में सेवकाई (क्रमश:)।
  - 8. फुटकर शिक्षा (लूका 17:1-10)।
- द. बैतनिय्याह में।
  - 1. लाज़र को जिलाना (यूहन्ना 11:1-46)।
  - 2. महासभा का आदेश (यूहन्ना 11:47-53)।
- ध. पलिश्तीन की अन्तिम यात्रा।
  - 1. इफ्राइम में जाना (यूहन्ना 11:54)।
  - 2. सामरिया और गलील में से होकर (लूका 17:11ख)।
- न. यरूशलेम की अन्तिम यात्रा (लूका 17:11क)।
  - 1. दस कोढ़ियों को चंगा करना (लूका 17:12-19)।
  - 2. राज्य पर शिक्षा (लूका 17:20-37)।
  - 3. प्रार्थना पर दृष्टांत
    - क. हठी विधवा का दृष्टांत (लूका 18:1-8)।
    - ख. फरीसी और चुंगी लेने वाले का दृष्टांत (लूका 18:9-14)।

परिचय

हम सब कभी न कभी "बुरे व्यवहार" से पीड़ित होते हैं और जब पीड़ित होते हैं, तो इससे हमारे जीवन प्रभावित होते हैं। बुद्धिमान ने कहा है कि मनुष्य जैसा "अपने मन में विचार करता है, वैसा ही वह आप है" (नीतिवचन 23:7)। मैंने जॉर्ज डब्ल्यू. बेली को इसे इस प्रकार कहते सुना है: "हो सकता है, आप वह न हों जो आप अपने आप को समझते हैं, परन्तु जो आप *सोचते हैं,* वही आप *हैं*।" हर किसी के लिए कभी-कभी अपने व्यवहार में थोड़ा परिवर्तन लाना आवश्यक होता है।[1]

इस अध्ययन में, हम यीशु को पलिश्तीन के अन्तिम दौरे पर देखेंगे। हम पिरिया से बैतनिय्याह, बैतनिय्याह से जंगल और जंगल से सामरिया और गलील को उसके जाने के

बारे में देखेंगे। अन्त में, हम उसका क्रूस की ओर जाना यरूशलेम से आरम्भ करते देखेंगे। यह जानकर कि पृथ्वी पर उसका समय थोड़ा रह गया है, मसीह ने अपनी शिक्षा और तेज़ कर दी। उसकी अधिकांश शिक्षा अपने चेलों के लिए और इसमें से अधिकांश फरीसियों से सम्बन्धित थी (देखें लूका 17:20; 18:10; यूहन्ना 11:46)। यह सारी शिक्षा, किसी न किसी तरह, *उचित व्यवहार* के महत्व से जुड़ी हुई थी। प्रभु के अनुयायियों के लिए उचित व्यवहार पहली शताब्दी में भी आवश्यक था और आज भी है।

पाप के प्रति अपने व्यवहार को बदलें (लूका 17:1-10)

पिछले पाठ में दृष्टांतों की एक शृंखला दी गई थी, जिनमें से अधिकतर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से, फरीसियों के लिए थे (लूका 14:1, 12, 16; 15:1–3; 16:13, 14)। यीशु ने अपने चेलों को सामान्य निर्देशों की शृंखला दी।

पाप के प्रति व्यवहार: चिंता (आयतें 1–3ख)

यह निर्देश उन पर जो ''छोटों'' के लिए ठोकर का कारण बनते हैं, हाय के साथ शुरू हुआ (आयतें 1, 2)।[2] यीशु ने कई बार ''छोटों'' शब्द का इस्तेमाल अपने चेलों के लिए, जो अभी समझ और परिपक्वता में बच्चे थे, किया। संदर्भ में, दोषी पक्ष फरीसी थे (16:14), परन्तु नया नियम सिखाता है कि हम में से हर किसी को दूसरों को ठोकर लगने का कारण बनने से बचना चाहिए (देखें 1 कुरिन्थियों 8:13)। मसीह ने अपने चेलों को चेतावनी दी कि ''सचेत रहो'' (लूका 17:3क)। अन्य शब्दों में, ''इस पाप के, जिसकी अभी बात हो रही है, दोषी मत बनो।''

उसने आगे कहा, ''यदि तेरा भाई अपराध करे तो उसे समझा'' (आयत 3ख)। यह शिक्षा प्रसिद्ध नहीं है, परन्तु यह जरूरी शिक्षा है। यदि किसी भाई के जीवन में पाप है तो उससे उसकी आत्मा दोषी होगी, हमें इसे नज़रअन्दाज़ नहीं करना चाहिए। प्रेम इस बात की मांग करता है कि हम उसका सामना करें और उसे सुधारने का प्रयास करें (याकूब 5:19, 20)। पर, ''नम्रता'' (गलातियों 6:1) और प्रेम (इफिसियों 4:15) से।[3]

पापियों के प्रति व्यवहार: तरस (आयतें 3ग–6)

हमें केवल समझाना ही नहीं, बल्कि क्षमा करने के लिए भी तैयार रहना चाहिए (आयत 3ग)। जे. डब्ल्यू. मैक्गार्वे ने सुझाव दिया है कि धार्मिकता की ज़िम्मेदारी तो समझाना है, परन्तु प्रेम की ज़िम्मेदारी क्षमा करना है।[4] प्रभु ने अपने अनुयायियों को बताया कि यदि कोई उनके विरुद्ध एक दिन में सात बार भी पाप करे तो उन्हें क्षमा करने के लिए तैयार रहना चाहिए (आयत 4)।[5]

चेलों को यह कठिन लगा। वे पुकार उठे, ''हमारा विश्वास बढ़ा'' (आयत 5)। अन्य शब्दों में, ''हमें वह विश्वास दे, जो इस चुनौती का सामना करने के लिए आवश्यक है!''[6] यीशु उन्हें बता सकता था कि उनका विश्वास कैसे बढ़ सकता है (रोमियों 10:17; देखें

यूहन्ना 17:20; 20:31)। वास्तव में इसके बजाय उसने उन्हें इसकी सामर्थ का एक उदाहरण देकर विश्वास के महत्व को समझने के लिए उनकी सराहना की (लूका 17:6)।[7]

पाप का निर्णय करने वाले के प्रति व्यवहार: अफसोस (आयतें 7-10)

सामान्य निर्देश एक चेतावनी के साथ समाप्त हुए। यदि पाप और पापियों के प्रति सही व्यवहार रखना हो तो किसी को क्या करने की *आवश्यकता* होती है? क्या इससे परमेश्वर (पापियों का न्याय करने वाला) उसके प्रति जवाबदेह होता है? नहीं। फरीसियों को लगता था कि उनकी ''धार्मिकता'' उन्हें स्वर्ग में पहुंचा देगी (देखें लूका 18:9-12), परन्तु उनकी यह सोच गलत थी। इस बात पर ज़ोर देने के लिए मसीह ने एक दास की बात बताई, जिसे अपने कर्त्तव्य के लिए कोई विशेष पहचान प्राप्त नहीं हुई थी (लूका 17:7-9)। प्रभु ने निष्कर्ष निकाला, ''इसी रीति से तुम भी, जब उन सब कामों को कर चुको जिस की आज्ञा तुम्हें दी गई थी, तो कहो, हम निकम्मे दास हैं; कि जो हमें करना चाहिए था वही किया है'' (आयत 10)।

हम में से किसी ने ''आज्ञा दी हुई सभी बातें'' न तो कभी पूरी की हैं और न करेंगे (देखें रोमियों 3:10; भजन संहिता 143:2)। यदि कर भी सकते तो भी हम ''निकम्मे दास'' *ही होते।* लूका 17:10 परमेश्वर के अनुग्रह और कृपा की आवश्यकता की पुकार करता है।

यीशु के प्रति अपने व्यवहार को बदलें (यूहन्ना 11:1-54)

पिरिया में यीशु की सेवकाई बैतनिय्याह से आए एक आवश्यक संदेश के कारण रुक गई (आयत 1), जो यरूशलेम के निकट था (आयत 18)। मसीह की मित्र मरियम और मारथा[8] ने संदेश भेजा कि उनका भाई लाज़र बीमार है (आयत 3)। आश्चर्य की बात है कि यीशु उस संदेश का जवाब देने से पहले दो दिन तक वहां रुका रहा (आयत 6)। यूहन्ना ने ज़ोर दिया है कि यह रुकना उदासीनता के कारण नहीं था, क्योंकि मसीह इस व्यक्ति से और उसकी बहनों से प्रेम करता था (आयत 5)। न ही यह रुकना यह सुनिश्चित करने के लिए था कि यीशु के बैतनिय्याह में पहुंचने से पहले लाज़र मर जाए। इस तथ्य पर विचार करते हुए कि जब अन्त में मसीह बैतनिय्याह में पहुंचा तो लाज़र को मरे हुए चार दिन हो चुके थे (आयतें 17, 39), यदि यीशु संदेश सुनते ही चल पड़ता, तो भी कोई ऐसा मानवीय साधन नहीं था, जिसके द्वारा वह अपने मित्र के मरने से पहले वहां पहुंच जाता।[9] शायद दो दिन की देरी किसी के मन में यह संदेह न रहने देने के लिए की गई थी कि लाज़र *सचमुच* मरा था (आयत 39)। वह मूर्छा से जागना नहीं, बल्कि मुर्दों से जिलाया जाना था।

देरी का कारण जो भी हो, परमेश्वर की योजनाएं और उद्देश्य किसी भी तर्कसंगत संदेह से दूर इस त्रासदी का इस्तेमाल यह सिद्ध करने के लिए थीं कि यीशु परमेश्वर का पुत्र है (आयतें 4, 15, 42)। कहानी को पढ़ते हुए, ''तब'' और ''जब'' शब्दों पर ध्यान दें (आयतें 16, 20, 32, 33, 45)। ये शब्द न केवल घटनाओं की शृंखला बनाते हैं, बल्कि

यह भी ज़ोर देते हैं कि जो कुछ हुआ, उसका कोई कारण था। इसमें ईश्वरीय उद्देश्य पूरा किया जा रहा था।

लाज़र का जी उठना "मसीह की सेवकाई का चरम आश्चर्यकर्म" माना जाता है।[10] हमने पहले दो वृत्तांतों का अध्ययन किया है, जिनमें यीशु ने नाईन की विधवा के पुत्र (लूका 7:11-17) और याईर की बेटी (मरकुस 5:22-24, 35-43) को जिलाया था, परन्तु लेखकों ने उन घटनाओं को बताने के लिए शब्दों की कंजूसी की है। लाज़र के जी उठने और बाद की घटना के लिए पूरा एक अध्याय दिया गया है। यह जी उठना निराला था। क्योंकि यह गलील में नहीं, बल्कि यीशु के शत्रुओं से दूर हुआ था। यह एक ऐसा आश्चर्यकर्म होना था, जिससे कोई इनकार नहीं कर सकता (यूहन्ना 11:47), ऐसा आश्चर्यकर्म जिससे पूरा क्षेत्र चकित हो गया (यूहन्ना 12:9), और एक ऐसा आश्चर्यकर्म कि यीशु के शत्रुओं को भी विश्वास हो गया (यूहन्ना 11:45; 12:11)। यह विशेष घटना थी, जिससे मसीह की नियति पर मोहर लग गई (यूहन्ना 11:47-53)।

एक बहन का व्यवहारः मसीह पर भरोसा रखा जाए (आयतें 17-46)

संदेश मिलने के दो दिन बाद, यीशु ने यहूदिया में लौटने की अपनी इच्छा बताई (11:7) जबकि उसके चेलों ने उसे वहां जाने का खतरा याद कराया (यूहन्ना 11:8; देखें 10:31, 39)। जब वे अपने प्रभु को रोक नहीं पाए, तो उन्होंने उसके साथ चलने का निर्णय लिया, बेशक उन्हें लगा कि वे मरने जा रहे हैं (11:16)।[11]

जब मसीह बैतनिय्याह के बाहरी इलाके में पहुंचा (आयत 30), तो मारथा उससे मिलने आई (आयत 20)। उसे देखकर उसके शब्दों में सामान्य रूप में उसकी शक्ति में उसका विश्वास और विशेष चंगाई देने की सामर्थ में उसका विश्वास दिखाई दिया (आयतें 21, 22)। उसे स्पष्टतया अपने भाई को जिलाने की प्रभु की मंशा का कोई आभास नहीं था (आयतें 24, 39)। मारथा और यीशु में हुई बातचीत में दो यादगारी बातें हैं।

- *एक दृढ़ कथन:* यीशु ने उससे कहा, "पुनरुत्थान और जीवन मैं ही हूं, जो कोई मुझ पर विश्वास करता है वह यदि मर भी जाए तो भी जीएगा,[12] और जो कोई जीवित है और मुझ पर विश्वास करता है, वह अनन्त काल तक न मरेगा। ..."[13] (आयतें 25, 26)। यह प्रभु का एक और "मैं हूं" कथन है। ऐसा कथन ढिठाई का चरम होता, यदि यीशु वह अर्थात परमेश्वर का ईश्वरीय पुत्र नहीं था जो होने का उसने दावा किया था।
- *विश्वास करने की पुष्टि:* उसने उससे कहा, "हां हे प्रभु, मैं विश्वास करती हूं कि परमेश्वर का पुत्र मसीह जो जगत में आने वाला था, वह तू ही है" (आयत 27)। मारथा का तिहरा अंगीकार यीशु के वह होने की अद्‌भुत समझ को दर्शाता है। इस अंगीकार को कैसरिया फिलिप्पी में किए गए पतरस के अंगीकार से मिलाना सही है (मत्ती 16:16)।

मारथा और यीशु के साथ मरियम के मिल जाने के बाद, वे और शोक करने वालों की भीड़ उसकी कब्र की ओर चली गई, जहां लाज़र को रखा गया था। बहते आंसू देखकर मसीह, ''आत्मा में बहुत ही उदास हुआ, और घबराया''[14] (यूहन्ना 11:33)। फिर वे शब्द आए, जिन्हें हम में से अधिकतर लोग जानते हैं:[15] ''यीशु रोया'' (आयत 35)। पास खड़े लोगों को लगा कि वह इसलिए चिल्लाया, क्योंकि उसका मित्र खो गया था (आयत 36), परन्तु ऐसा लगता नहीं है, क्योंकि कुछ ही पलों में उसने लाज़र से फिर मिल जाना था। स्पष्टतया वह इसलिए रोया, क्योंकि उसकी प्रिय मरियम और मारथा चिल्ला रही थीं; शायद उनके प्रति सहानुभूति के कारण उसके आंसू निकल आए।[16] आज, भी हम उसे देख सकते हैं, वह ''हमारी निर्बलताओं में हमारे साथ दुखी'' हो सकता है (इब्रानियों 4:15)।

मसीह ने कब्र के सामने से पत्थर हटवाया (यूहन्ना 11:38, 39)।[17] परमेश्वर से प्रार्थना करने के बाद (आयतें 41, 42) ''उस ने बड़े शब्द से पुकारा, कि हे लाजर, निकल आ'' (आयत 43)। मैक्गार्वे ने लिखा है, ''यह आनन्दपूर्वक कहा जाता है कि उसने लाज़र को नाम लेकर पुकारा, वरन सारे मुर्दे जी उठते।''[18] क्या आप भीड़ के आश्चर्य की तथा मरियम और मारथा के आनन्द की कल्पना कर सकते हैं, जब लाज़र ''... कफ़न से हाथ पांव बान्धे हुए निकल आया और उसका मुंह अंगोछे से लिपटा हुआ था ...'' (आयत 44)?

इस यादगार घटना को देखने वाले वे लोग थे, जिन्हें यूहन्ना ने ''यहूदियों'' कहा (आयतें 19, 31, 33)। अपने विवरण के इस भाग में, यूहन्ना ने सामान्यतया इस वाक्यांश का इस्तेमाल यहूदी अगुओं के लिए किया और यहां भी ऐसा ही लगता है।[19] यह तथ्य कि ऐसे लोग मरियम और मारथा के साथ सहानुभूति के लिए बैतनिय्याह में जा सके, सुझाव देता है कि समाज में इस परिवार का बड़ा सम्मान था। इससे लाज़र के जिलाए जाने से उस क्षेत्र में प्रभाव बढ़ना था (यूहन्ना 12:9-11)।

वे ''यहूदी'' जो भी थे, उनमें से कुछ लोग निष्कपट मनों वाले थे और चकित करने वाले आश्चर्यकर्म को देखकर विश्वास करने लगे थे (11:45)। उनमें से कुछ लोगों ने यरूशलेम में ''फरीसियों के पास आकर यीशु के कामों का समाचार दिया'' (आयत 46)।

महासभा का व्यवहार: प्रतियोगिता से पीछा छुड़ाना (आयतें 47-54)

महासभा की विशेष सभा बुलाई गई (आयत 47)।[20] कुछ देर पहले, मसीह ने उनकी बात की थी, जो ''मरे हुओं में से कोई जी भी उठे तौ भी उसकी नहीं मानेंगे'' (लूका 16:31)। लाज़र के जी उठने से कठोर मन वाले अगुओं में विश्वास उत्पन्न नहीं हुआ, परन्तु वे डर गए।

सभा की रुचि यह पता लगाने में नहीं थी कि आश्चर्यकर्म हुआ है[21] या यह जानना नहीं कि यीशु सचमुच में वही था, जो होने का वह दावा करता था, बल्कि उनकी दिलचस्पी अपने कामों और अपनी पदवियों के लिए थी (देखें आयत 48) कि यदि यीशु नहीं रुकता तो शीघ्र ही पूरे देश में कोलाहल मच जाएगा। इससे रोमियों को देश पर और

बन्दिशें लगाने का अवसर मिल सकता था और ऐसा होने पर (भयंकर का भी भयंकर!), उनकी सत्ता उनके हाथ से जाती रहती।

उन्होंने अपनी समस्या का केवल एक ही समाधान देखा कि यीशु को मार दिया जाए। महायाजक कैफा[22] ने सभा को बताया, "तुम्हारे लिए यह भला है, कि हमारे लोगों के लिए एक मनुष्य मरे, और न यह, कि सारी जाति नाश हो" (आयत 50)।

जैसा कैफा का संकेत था, इन शब्दों का अर्थ था कि विशेष वर्ग के यहूदियों की रोमी पदवियों पर अधिकार की स्थिति बरकरार रखने के लिए यीशु की मृत्यु आवश्यक थी। परन्तु यूहन्ना ने अवलोकन किया कि कैफा के महायाजक के पद के कारण परमेश्वर उसके दार्शनिक सिद्धांत का इस्तेमाल कुल मिलाकर किसी अलग उद्देश्य के लिए कर रहा था। "अनजाने में महायाजक ने इस्राएल और सब अन्यजातियों के लिए मसीह की वैकल्पिक मृत्यु की भविष्यवाणी की। ..."[23]

"सो उसी दिन से वे उसके मार डालने की सम्मति करने लगे" (आयत 53; 11:57 भी देखें)। एक समय लोग यीशु को मार डालना चाहते थे (देखें यूहन्ना 5:18; 7:1), परन्तु यह उससे अलग था। पिछले आक्रमण छुटपुट होते थे, पर इस बार मसीह के शत्रुओं ने उसे मारकर ही चैन लेना था। यीशु को मारने के पिछले प्रयास व्यक्तिगत और अनाधिकारिक थे; परन्तु इसके बाद के प्रयास सभा के अगुओं के समर्थन से थे।

तौ भी, सबसे महत्वपूर्ण अन्तर बिल्कुल स्पष्ट नहीं है। पहले *फरीसी* मसीह को नष्ट करने की कोशिश में अगुआई करने वाले थे (मरकुस 3:6) परन्तु महासभा में सदूकियों का बहुमत था।[24] सदूकी पुनरुत्थान में विश्वास नहीं रखते थे (मत्ती 22:23) और इसीलिए वे लाज़र के जी उठने के समाचार से परेशान थे। इसके बाद, यीशु की मृत्यु की योजना में अगुआई करने वाले *सदूकी* ही थे। उनकी राजनैतिक पहुंच थी, जो फरीसियों की नहीं थी।

एक बार फिर, यीशु यरूशलेम के सामान्य क्षेत्र से निकल गया। वह और उसके चेले यहूदिया के जंगल के निकट इफ्राइम में चले गए (आयत 54)। बहुत से लेखकों का विचार है कि यह छोटा-सा कस्बा यरदन घाटी में जाने वाले नाले के पास यहूदिया के उत्तर-पूर्व में था।[25]

आशिषों के प्रति अपने व्यवहार को बदलें (लूका 17:11-19; यूहन्ना 11:55)

हम नहीं जानते कि यीशु इफ्राइम में कितनी देर रुका। एक समय, वह और उसके प्रेरित उत्तर की ओर गए। लूका के अनुसार, "वह यरूशलेम को जाते हुए सामरिया और गलील के बीच से होकर जा रहा था"[26] (आयत 17:11ख)। वह सामरिया और गलील में चेलों के पास उन्हें प्रोत्साहन देने के लिए दोबारा गया होगा।

यीशु का यरूशलेम का दौरा आरम्भ हुआ (लूका 17:11क; यूहन्ना 11:55)

अन्त में, फसह के पर्व का समय निकट आ गया और यात्री यरूशलेम की ओर जाने

लगे (यूहन्ना 11:55)। मसीह और बारहों चेले[27] यरदन नदी के पूर्वी तट के साथ-साथ होते हुए दक्षिण की ओर जाने वाले यात्रियों के कारवां के साथ मिल गए होंगे। कम से कम, चलते हुए उसके आस-पास लोगों की भीड़ थी। पर्व में जाने के इस दौरे पर, "जैसा कि उसके भाइयों ने पहले सुझाव दिया था [यूहन्ना 7:1-6], उसका अपने ही अनुयायियों द्वारा राजा के रूप में स्वागत किया गया।"[28] शेष पाठ और अगले दो पाठ यरूशलेम के इस अन्तिम दौरे के समय यीशु की शिक्षा तथा गतिविधियों के बारे में बताते हैं (लूका 17:11क)।

यीशु के यरूशलेम के दौरे में रुकावट (लूका 17:11-19)

इस दौरे की पहली लिखित घटना स्पष्टतया गलील और सामरिया की सीमा से दूर, पिरिया के उत्तरी भाग में घटी (आयत 11)।[29] इसी गांव में यीशु को दस कोढ़ी मिले (आयतें 12, 13)। उन में से एक सामरी था (आयत 16); अन्य सम्भवतया यहूदी थे। एक लाइलाज बीमारी ने जाति के बन्धन तोड़ दिए थे (यूहन्ना 4:9)।

मसीह द्वारा दस लोगों को चंगाई देने के बाद (आयत 14), केवल सामरी ही धन्यवाद देने के लिए वापस आया (आयतें 15, 16)। प्रभु की प्रतिक्रिया उस हर व्यक्ति को, जो उसकी आशिषों के लिए धन्यवाद और परमेश्वर को महिमा नहीं दे पाता, अभियोग लगाती है: "क्या दसों शुद्ध न हुए, तो फिर वे नौ कहां हैं?" (आयत 17)। पौलुस ने कहा है कि हम सब को "धन्यवाद के साथ उस में जागृत" रहना आवश्यक है (कुलुस्सियों 4:2)। औरों ने "कृत्तज्ञता वाला व्यवहार" वाक्यांश इस्तेमाल किया है।

परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं के प्रति अपने व्यवहार को बदलें (लूका 17:20-37)

परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं पर विश्वास करें (आयतें 20, 21)

परछाईं की तरह यीशु के साथ रहने वाले आलोचक, फरीसी, भीड़ के साथ ही थे। उन्होंने उससे पूछा, "परमेश्वर का राज्य कब आएगा?" (आयत 20क)। यह प्रश्न सम्भवतया उसे बदनाम करने के अभियान को जारी रखने के भाग के रूप में मज़ाक में पूछा गया था (लूका 11:54)।[30] उनके इन शब्दों से यीशु को मज़ाक करने की कल्पना करना कठिन नहीं है कि "अपनी सेवकाई आरम्भ करने के समय, तुमने कहा था कि राज्य 'निकट आया' है [मत्ती 3:2]। पर अब तीन साल होने को हैं, अभी तक उसका कोई नामो-निशान नहीं है। बता तो सही यह राज्य कब आ रहा *है*?" शेष यहूदियों की तरह उनके दिमाग़ में एक सांसारिक राज्य था, जो धूम धड़ाके के साथ आना था।

ज़बर्दस्त धीरज दिखाते हुए, मसीह ने फिर अपने राज्य के आत्मिक होने का संकेत दिया। पहले तो उसने कहा, "परमेश्वर का राज्य प्रकट रूप से नहीं आता" (लूका 17:20ख)। यहूदी लोग भीतरी परिवर्तन के बजाय बाहरी चिह्नों को देख रहे थे। यीशु के

शब्द आज भी प्रासंगिक हैं। यह दावा करके कि "परमेश्वर का राज्य प्रकट रूप से नहीं आता," "यीशु ने अपने वापस आने के समय, समकालीन घटनाओं से भविष्यवाणियों की तुलना करके, भविष्यवाणी बताने के सभी प्रयासों वाली किताब को बन्द कर दिया। ..."[31]

फिर प्रभु ने कहा, "क्योंकि देखो, परमेश्वर का राज्य तुम्हारे बीच में है" (आयत 21ख)। यूनानी शब्दों के अनुवाद "तुम्हारे बीच में" का अनुवाद "तुम्हारे अन्दर" हो सकता है। यदि यहां इसका अर्थ यह है तो यीशु कह रहा था कि राज्य (परमेश्वर का शासन) भीतरी होता है, न कि बाहरी। परन्तु यदि ये शब्द फरीसियों पर लागू किए जाएं, तो "तुम्हारे बीच में" अधिक उपयुक्त हैं। यद्यपि राज्य/कलीसिया वास्तव में कई सप्ताहों बाद स्थापित होना था,[32] शीघ्र ही सिंहासन पर बैठने वाला राजा वहां "उनके बीच में" ही था।

परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं के लिए तैयार रहें (आयतें 22-37)

ध्यान अपने शत्रुओं से हटाकर अपने चेलों पर लगाकर मसीह अपने दूसरे आगमन की बातें करने लगा। शायद फरीसियों के संदेहवाद ने उसे उस दिन का ध्यान दिला दिया, जिसमें सभी अविश्वासियों को दण्ड दिया जाएगा। शायद फरीसियों द्वारा परेशान करने के कारण उसे अपने अनुयायियों द्वारा सहे जाने वाले सताव का ध्यान आया, जिससे उसे उन्हें यह आश्वासन देने के लिए कि अन्त में, वे विजयी होंगे, प्रेरणा मिली। विषय बदलने का कारण जो भी हो, उसने युग के अन्त में अपने लौटने पर विस्तृत संदेश दिया। अन्य बातों में, उसने अपने प्रेरितों को बताया:

- उसका आना सब के सामने होगा: उसके लौटने की प्रतीक्षा करते हुए (आयत 22), उन्हें चाहिए उन दावों से भ्रमित न हों कि वह गुप्त रूप में वापस आ गया था; क्योंकि उसके आने पर सबको पता होगा (आयतें 27-30)।
- उसका आना अप्रत्याशित होगा (आयतें 27-30)। इसलिए कई बिना तैयारी के पाए जाएंगे (आयतें 34-36)।

इस अवसर पर दिए गए मसीह के संदेश से उसकी भावी शिक्षा का पूर्वाभास मिला। यह मत्ती 24 की तरह ही है,[33] जिसमें उसके दूसरे आगमन तथा यरूशलेम के विनाश की चर्चा है (देखें मत्ती 24:1-3)। मत्ती 24 में दो घटनाओं की शिक्षाएं एक-दूसरे में समाई लगती हैं।[34] इसी प्रकार लूका 17:22-37 की कुछ भाषा से यरूशलेम के विनाश, जो दूसरे आगमन की तरह ही है, का पूर्वाभास हो सकता है।[35]

इस संदेश का मुख्य कथन आयत 25 में मिलता है: "परन्तु पहिले आवश्यक है, कि वह बहुत दुख उठाए, और इस युग के लोग उसे तुच्छ ठहराएं।" यीशु नहीं चाहता था कि उसके चेले इस तथ्य को भूल जाएं कि दूर भविष्य में उत्तेजनापूर्ण दिनों के बावजूद, *पहले* उसका मरना आवश्यक था।

प्रार्थना के प्रति अपना व्यवहार बदलें (लूका 18:1-14)

मसीह (लूका 17:25) और उसके अनुयायियों के लिए आने वाले समय कठिन थे (18:7)–जिनमें केवल वही लोग स्थिर रह सकते थे, जो परमेश्‍वर के निकट रहे हैं। यीशु प्रार्थना के विषय पर आ गया।

परमेश्‍वर में भरोसा रखें (आयतें 1–8)

पहले ''उसने इस के विषय में कि नित्य प्रार्थना करना और हियाव न छोड़ना चाहिए उन से यह दृष्टान्त कहा'' (आयत 1)। उसने बताया कि ''किसी नगर में एक न्यायी रहता था; जो न परमेश्‍वर से डरता था और न किसी मनुष्य की परवाह करता था'' (आयत 2), परन्तु फिर भी उसने एक विधवा की हठ के कारण उसकी विनती मान ली (आयतें 3–5)।[36] सामान्य प्रासंगिकता यह है कि यदि कठोर मन वाला न्यायी इस प्रकार पिघल सकता था, तो प्रेमी परमेश्‍वर अपने बच्चों की विनती पर ध्यान क्यों न देगा! मसीह ने अपने चेलों को विशेष बात भी बतानी थी कि जब वे प्रताड़ित हों, तो हिम्मत हारने के बजाय उन्हें परमेश्‍वर पर भरोसा रखना चाहिए, क्योंकि अन्त में न्याय तो वही करेगा (आयतें 7, 8क)।[37]

अपने अनुयायियों पर आने वाले दबाव को जानते हुए, यीशु ने आश्‍चर्य व्यक्त किया, ''... मनुष्य का पुत्र जब आएगा, तो क्या वह पृथ्वी पर विश्‍वास पाएगा?'' (आयत 8ख)। संदर्भ में, इसका अर्थ है, ''क्या उसे ऐसा विश्‍वास मिलेगा जो कठिन समयों के बावजूद परमेश्‍वर से प्रार्थना करने वाला हो?''[38]

अपने आप में भरोसा न रखें (आयतें 9–14)

केवल प्रार्थना करना ही काफ़ी नहीं है; हमें प्रार्थना के समय सही व्यवहार भी रखना आवश्यक है। इसलिए मसीह ने ''कितनों को जो अपने ऊपर भरोसा रखते थे, कि हम धर्मी हैं, और औरों को तुच्छ जानते थे'' दूसरा दृष्टांत कहा (आयत 9)। यह फरीसियों का स्पष्ट चित्रण था, परन्तु प्रभु का ध्यान दूसरों पर अधिक होगा, जो उन स्वधर्मी अगुओं से प्रभावित हो रहे थे (लूका 12:1)।[39]

एक घमण्डी फरीसी का, जिसने प्रार्थना को ''अपनी पीठ थपथपाने'' का समय बना दिया था, प्रसिद्ध दृष्टांत है[40] (आयतें 11, 12)। उसकी तुलना एक चुंगी लेने वाले से की गई, जिसने केवल इतना ही कहा था, ''हे परमेश्‍वर मुझ पापी पर दया कर'' (आयत 13)। यीशु ने कहानी समाप्त की, ''मैं तुम से कहता हूं, कि वह दूसरा नहीं; परन्तु यही मनुष्य धर्मी ठहराया जाकर अपने घर गया; क्योंकि जो कोई अपने आप को बड़ा बनाएगा, वह छोटा किया जाएगा; और जो अपने आप को छोटा बनाएगा, वह बड़ा किया जाएगा'' (आयत 14)।[41] जब हम प्रार्थना करते हैं, तो हमारा व्यवहार दीनता वाला होना चाहिए।

सारांश

अब अपने व्यवहार की जांच करें। पौलुस ने कुरिन्थुस के लोगों को बताया था, ''क्योंकि मैंने इसलिए भी लिखा था, कि तुम्हें परख लूं, ...'' (2 कुरिन्थियों 2:9क)। एम्लीफाइड बाइबल में इसे विस्तार दिया गया है: ''तुम्हारा *व्यवहार* परखने के लिए।'' आप उचित व्यवहार बनाए रखने में अपने संघर्ष को पहले ही जानते होंगे; यह ऐसी लड़ाई है, जो कभी खत्म नहीं होती। दूसरी ओर, आप को किसी मित्र से पूछना पड़ सकता है, जिसे लगता हो कि कभी आपका ''बुरा व्यवहार'' हुआ है। सबसे बढ़कर, परमेश्वर से आपका मन और व्यवहार परखने को कहें (भजन संहिता 26:2; यिर्मयाह 12:3)।

हम में से हर कोई अपने व्यवहार में कैसे सुधार ला सकता/सकती है? सम्भवतया इसका श्रेष्ठ उत्तर फिलिप्पियों 4:8 में मिलता है: ''इसलिए हे भाइयो जो-जो बातें सत्य हैं, और जो-जो बातें आदरणीय हैं, और जो-जो बातें उचित हैं, और जो-जो बातें पवित्र हैं, और जो-जो बातें मन भावनी हैं, अर्थात जो भी सद्गुण और प्रशंसा की बातें हैं, उन पर ध्यान लगाया करो।'' बुरे व्यवहार को नष्ट करने का सबसे अच्छा ढंग अपने मनों को सकारात्मक और भलाई वाले विचारों से भर लेना है।

प्रभु का व्यवहार अपनाने की चुनौती दी गई है। पौलुस ने लिखा है, ''जैसा मसीह यीशु का स्वभाव था, वैसा ही तुम्हारा भी स्वभाव हो'' (फिलिप्पियों 2:5)। हम इस आदर्श तक पूर्णतया कभी नहीं पहुंच सकते; परन्तु जितना हम इसके निकट आएंगे, उतनी ही हमें मन की शांति मिलेगी, और उतना ही हम दूसरों के लिए आशीष होंगे।

टिप्पणियां

[1]यदि आप वहां रहते हों, जहां लोग ''देशीय और पश्चिमी'' संगीत से परिचित हों, तो आप हंसाने वाले ''देशीय और पश्चिमी'' गीत की बात कर सकते हैं, जो ''व्यवहार में समझौता'' पर बात करता है। [2]जैसा कि लूका के इस भाग के साथ है, इस पाठ की अधिकतर आयतें यीशु की आरम्भिक शिक्षाओं का ध्यान दिलाती हैं, जिन पर पहले चर्चा की जा चुकी है। उदाहरण के लिए, लूका 17:1 की मत्ती 18:7, 10 से और लूका 17:2 की मत्ती 18:6 से तुलना करें। [3]इस प्रस्तुति में स्थान मुझे केवल इन वचनों की सीमित प्रासंगिकता बनाने की अनुमति देता है। पाठ में तथा टिप्पणियों में कुछ सुझाव मिलेंगे। सिखाते हुए, आप चाहें तो इन विचारों को बढ़ाकर अतिरिक्त प्रासंगिकता बना सकते हैं। [4]जे. डब्ल्यू मैक्गर्वे एण्ड फिलिप वाई पैंडलटन, *द फ़ोरफ़ोल्ड गॉस्पल ऑर ए हारमनी ऑफ़ द फ़ोर गॉस्पल्स* (सिंसिनटी: स्टैंडर्ड पब्लिशिंग कं., 1914), 517. [5]इसकी तुलना मत्ती 18:21-35 की शिक्षा से करें। कुछ लोग यह सिखाने के लिए कि जब वह ''मन-फिराए'' (अर्थात क्षमा मांगे) तभी हमें किसी को क्षमा करने की आवश्यकता है, लूका 17:3, 4 का इस्तेमाल करते हैं। पर यह वचन वास्तव में ऐसा नहीं कहता। यह कहता है कि *यदि* वह मन फिराए, तो हमें उसे क्षमा कर देना चाहिए न कि उसके मन फिराने की प्रतीक्षा करनी चाहिए। मत्ती 18:21-35 ऐसी कोई बाधा नहीं डालता। [6]प्रभु ने हमें कई चुनौतियां दी हैं, जिन्हें पूरा करना कठिन है। हम में से हर किसी को पुकारना चाहिए कि ''मेरा विश्वास बढ़ा!'' [7]''शहतूत का पेड़'' जड़ें लम्बी होने और निकालना कठिन होने के लिए प्रसिद्ध था। लूका 17:6 की तुलना मत्ती 17:20 से करें। [8]इससे पहले हम मरियम और मारथा से लूका 10:38-42 में मिले थे।

यूहन्ना 11:2 मरियम को बाद की एक घटना के द्वारा दिखाता है (यूहन्ना 12:3)। [9]क्योंकि हम नहीं जानते कि चार दिन (आयत 17) पूरे चार दिन थे या दो दिन देरी से (आयत 6) को दो पूरे दिन कहा गया, हम इस पर हठधर्मी नहीं हो सकते; पर ऐसा लगता नहीं है कि यीशु ने लाज़र के मरने से पहले बैतनिय्याह में प्रचार किया हो। यदि ये पूरे दिन थे, और यदि यीशु बैतनिय्याह से एक दिन की यात्रा की दूरी था, तो लाज़र संदेश ले जाने वालों के निकलने के थोड़ी देर बाद मर गया था। यदि यीशु दो दिन की दूरी पर था, और लाज़र लगभग उसी समय मरा, जब दूत यीशु के पास पहुंचे। यदि यीशु तीन दिन दूर था और संदेश सुनते ही वह चल पड़ा, तो लाज़र उसके बैतनिय्याह में आते हुए रास्ते में मर चुका होगा। [10]ऐडमंड पी. क्लौनी, जूनियर, *द लाइफ़ ऑफ़ क्राइस्ट* (ग्रोव सिटी, पैनसिलवेनिया: विज़ुअल्स, 1953), 31. यह यूहन्ना का सातवां "चिह्न" था।

[11]बोल उठने वाले का नाम थोमा था, जिसे "दिदुमस" भी कहा जाता था, जिसका अर्थ "जुड़वां" है। उसका कोई जुड़वां भाई होगा। [12]अन्य शब्दों में, "वह फिर से जी उठेगा।" [13]अन्य शब्दों में, "वह आत्मिक रूप से न मरेगा, और अन्ततः वह अनन्त जीवन पाएगा।" [14]यूनानी शब्दों का अनुवाद "बहुत ही उदास हुआ" और "घबराया" का इस्तेमाल सुसमाचार की पुस्तकों में कई बार यीशु के क्रोध को बताने के लिए नकारात्मक ढंग से किया जाता है। सुझाव दिया गया है कि वह परम्परा द्वारा मांग की जाने वाली अत्यधिक वेदना पसन्द नहीं करता था। यह भी हो सकता है कि वह इस तथ्य के बारे में कि पाप संसार में आ चुका था, जिस कारण मृत्यु और पीड़ा आई, क्रोधित था, जो मन की उस पीड़ा जैसा था, जिसे वह देख रहा था (देखें उत्पत्ति 3:3; रोमियों 5:12)। परन्तु इन शब्दों का केवल इतना संकेत हो सकता है कि वह व्याकुल था, क्योंकि उसके मित्र परेशान थे। [15]यूहन्ना 11:35 बाइबल की सबसे छोटी आयत है। इसकी संक्षिप्तता के कारण कई बार इसे बच्चे सबसे पहले याद करते हैं। [16]सुझाव दिया गया है कि यीशु की उदासी का एक कारण यह था कि वह लाज़र को धर्मी मुर्दों की धन्य स्थिति से शोक और पाप के संसार में ला रहा था (लूका 16:23)। बाद में लाज़र को फिर से मृत्यु की पीड़ा सहनी पड़नी थी। [17]ये आयतें हमें उस समय की कब्रों की कुछ जानकारी देती हैं। [18]मैक्गार्वे एण्ड पैंडलटन, 526. [19]"यहूदी" वाक्यांश यूहन्ना 11 के आरम्भ में (आयत 8) और अन्त में (आयत 55) यहूदी अगुओं के लिए कहा गया है। यह तर्कसंगत है कि यह अध्याय के मध्य में भी है। इसमें मुख्य उद्देश्य आयत 46 में "यहूदियों" (आयत 45) के समूह ने फरीसियों को बताया, पर वे अपने *साथी* अगुओं को बता रहे हो सकते हैं। [20]आयत 47 में "सभा" है।

[21]उन्होंने इनकार नहीं किया कि यीशु ने आश्चर्यकर्म किए थे (आयत 47), जिसमें मुर्दों को जिलाना भी शामिल था। [22]आयत 49 कहती है कि कैफ़ा "उस वर्ष का महायाजक" था। इसका अर्थ यह नहीं है कि "केवल उस वर्ष का" क्योंकि इसी अधिकार से उसने 18–36 ई. में कार्य किया था, बल्कि "उस *विशेष* वर्ष" का (अन्य शब्दों में, जिस वर्ष यीशु की मृत्यु हुई)। [23]रॉबर्ट एल. थॉमस, सं. एण्ड स्टैनली एन. गुंड्री, ऐसो. सं., *ए हारमनी ऑफ़ द गॉस्पल्स* (शिकागो: मूडी प्रैस, 1978), 161. [24]यूहन्ना 11:47, 57 में उल्लेखित अधिकतर "महायाजक" सदूकी ही थे। [25]पुस्तक में "मसीह के जीवन के समय पलिश्तीन" मानचित्र देखें। [26]इसका अनुवाद "वह सामरिया और गलील के बीच में से होकर गया" हो सकता है। विद्वानों को पक्का यकीन नहीं है कि इसका अर्थ यह है कि यीशु सचमुच सामरिया और गलील में से होकर गया या दोनों क्षेत्रों की सीमा तक ही पहुंचा (शायद पिरिया से)। [27]कुछ स्त्रियां जिन्होंने, गलील में उसकी सेवा की थी, भीड़ में जा रही होंगी (देखें मत्ती 27:55; मरकुस 15:41)। [28]रॉबर्ट डंकन कल्वर, *द लाइफ़ ऑफ़ क्राइस्ट* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर बुक हाउस, 1976), 196. [29]इस सामान्य स्थिति के लिए, पृष्ठ 184 पर "यीशु की सेवकाई के समय पलिश्तीन" मानचित्र देखें। [30]यह हो सकता है कि उसकी यात्रा जारी रहने के कारण उम्मीद बन्ध गई हो, इसलिए उनका प्रश्न ईमानदारी से पूछा गया था, पर ऐसा लगता नहीं है।

[31]जॉन फ्रैंकलिन कार्टर, *ए लेमैन'स हारमनी ऑफ़ द गॉस्पल्स* (नैशविल्ले: ब्रॉडमैन प्रैस, 1961), 227. [32]कलीसिया की स्थापना, मसीह की मृत्यु, गाड़े जाने तथा जी उठने के बाद आने वाले पहले पिन्तेकुस्त के दिन हुई थी (प्रेरितों 2)। [33]इन आयतों की तुलना करें: लूका 17:24/मत्ती 24:27 लूका 17:26, 27, मत्ती 24:37–39 लूका 17:31, मत्ती 24:17, लूका 17:35, मत्ती 24:41 लूका 17:37, मत्ती 24:28. लूका 17 में मिलने वाली कुछ विशिष्ट सामग्री मत्ती 24 में नहीं मिलती, उदाहरण के लिए लूका 17 में यीशु ने अपने सुनने

वालों के लिए तैयार रहने के लिए सदोम और अमोरा के विनाश का इस्तेमाल किया। यह ''लूत की पत्नी को स्मरण रखो'' (लूका 17:32) की ताड़ना जो केवल यहीं मिलती है ''अपना हाथ हल पर रखकर पीछे न देखना'' सिखाने का शानदार ढंग है (लूका 9:62)।[34]मत्ती 24 पर चर्चा इस पुस्तक में आगे दो भागों में दिए ''और वह चला गया'' पाठ में देखें।[35]मेरे दिमाग में विशेषकर 31 और 37 आयतें हैं। इन्हें द्वितीय आगमन पर लागू किया जा सकता है, पर मत्ती 24 की ऐसी ही भाषा यरूशलेम के विनाश के बारे में बात करती लगती है। इसी शृंखला में आगे मत्ती 24 पर चर्चा देखें।[36]इसे कई बार ''हठी विधवा का दृष्टांत'' कहा जाता है। ''हठी'' का अर्थ है ''ढीठ।''[37]लूका 18:7 की तुलना प्रकाशितवाक्य 6:9–11 से करें।[38]द लिविंग बाइबल का वाक्यांश है ''जिसे विश्वास हो और प्रार्थना कर रहा हो।'' ऐसी ही चिंता मत्ती 24:12, 13 में दिखाई गई है।[39]ऐसा नहीं था कि यीशु की शिक्षा से फरीसी अपने आप बदल जाएंगे, पर उसे उन लोगों के व्यवहार को प्रभावित करने की उम्मीद होगी, जो फरीसियों की सराहना करते थे। लेखक इसी बात पर ध्यान दिलाते हैं, क्योंकि दृष्टांत घुमा फिराकर शिक्षा देने के लिए तैयार किए गए थे, इसलिए यदि यीशु का मुख्य उद्देश्य फरीसियों को बदलना था, तो उसने फरीसी का उदाहरण इस्तेमाल नहीं किया होगा।[40]एच. आई. हेस्टर, *हार्ट ऑफ़ द न्यू टैस्टामेंट* (लिबर्टी, मिज़ोरी: क्वालिटी प्रैस, 1963), 179.

[41]इस दृष्टांत पर विस्तृत चर्चा के लिए, पृष्ठ 28 पर ''हे परमेश्वर, दया कर!'' पाठ देखें।